National Journal of Multidisciplinary Research and Development
ISSN: 2455-9040
Impact Factor: RJIF 5.22
www.nationaljournals.com
Volume 3; Issue 1; January 2018; Page No. 394-395

हिन्दी रीति परम्परा और आचार्य भिखारीदास

उपासना
सहायक प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, गौड़ ब्राह्मण महाविद्यालय, रोहतक, हरियाणा, भारत।

प्रस्तावना

हिन्दी रीति परम्परा का विकास आचार्य कृपाराम से प्रारम्भ होता है। हिन्दी रीतिकाल में मुगल बादशाहों का बोलबाला था तथा भक्तिकाल का अवसान हो रहा था। मुगलों के समय दरबारी मनोवृत्ति एवं चाटुकारिता बढ़ गई थी। कविवर्ग अपनी आय का स्त्रोत बढ़ाने के लिए दरबारों में शरण लेने लगे थे। इस अवधि में रीति परम्परा का विकास होता रहा। इस युग का सारा काव्य चाटुकारिता एवं उक्तिवैचित्र्य से परे नहीं है। इस काल के काव्यग्रंथों में विलास की मादकता अधिक दिखाई देती है।

रीतियुगीन काव्य को शास्त्रीय चिन्तन दृष्टि के परिप्रेक्ष्य में देखने से यह स्पष्ट होता है कि इस बात में अलंकार–निरूपण, रस एवं नायक–नायिका भेद निरूपण एवं सर्वांग निरूपक ग्रंथों की रचनाएँ हुई। इन शास्त्रीय कवियों में ऐसे कवि भी हैं, जिन्होंने अप्पयदीक्षित और जयदेव के आधार मानकर अलंकार निरूपण किया है। इस श्रेणी के कवियों में केशवदास, जसवन्त सिंह, मतिराम भूषण, मूरति मिश्र आदि है। नायक–नायिका भेद निरूपण करने वालों में मुख्यतः आचार्य कृपाराम, सूरदास, रहीम, नदेदास, चिन्तामणि आदि प्रमुख हैं। सर्वांग निरूपक कवियों में केशवदास, कुलपति मिश्र, देव, सूरति मिश्र, श्रीपति, सोमनाथ, भिखारीदास, जगत सिंह, ग्वाल आदि की गणना की जा सकती है। इसी प्रकार से हिन्दी रीति परम्परा में भिखारीदास का स्थान इस प्रकार से देखा जा
सकता है।

भिखारीदास रीतिकाल के श्रेष्ठ आचार्य हैं। यद्यपि यह तो नहीं कहा जा सकता कि इनमें एक सच्चे आचार्य की प्रतिभा, प्रौढ़ता, विवेचन–क्षमता, उद्भावना–शक्ति एवं मर्मग्राहिणी प्रज्ञा थी किन्तु यह निर्विवाद है कि इनका काव्यांग–निरूपण अपेक्षाकृत विस्तृत और पूर्ण हे। इनके सम्बन्ध में आचार्य शुक्ल ने लिखा है–"काव्यांगों के निरूपण में दास जी को सर्वप्रधान स्थान दिया जाता है क्योंकि इन्होंने छंद, रस, अलंकार, रीति, गुण–दोष, शब्द–शक्ति आदि सब विषयों का औरों से विस्तृत प्रतिपादन किया है।"

भिखारीदास जी प्रतापगढ़ के निकटवर्ती टयोंगा गाँव के निवासी थे। इन्होंने अपना वंश–परिचय कुछ विस्तार से दिया है। इनके वृद्ध प्रपितामह राय नरोत्तम दास, प्रपितामह राय रामदास, पितामह वीरभानु तथा पिता कृपालदास थे। यह जाति के श्रीवास्तव कायस्थ थे। इनके पुत्र का नाम अवधेश लाल था। 'काव्यनिर्णय' के साक्ष्य पर यह मान्य है कि इनके आश्रयदाता बाबू हिन्दूपति सिंह थे जो प्रतापगढ़ के सोमवंशी राजा पृथ्वीपतिसिंह के भाई थे।

भिखारीदास का सर्वश्रेष्ठ लक्षण–ग्रंथ 'काव्यनिर्णय' (संवत् 1803) है। इसके अतिरिक्त 'रससारांश (संवत् 1799), 'छंदार्णव पिंगल' (संवत् 1799) 'शृंगारनिर्णय' (संवत् 1807), 'नामप्रकाश' (संवत् 1795), 'विष्णुपुराण भाषा', 'छंदप्रकाश', 'शतरंजशतिका' 'अमरप्रकाश' आदि ग्रंथों का उल्लेख भी आचार्य शुक्ल ने अपने इतिहास में किया है। डॉ. किशोरीलाल गुप्त के अनुसार 'नामप्रकाश' और 'अमरप्रकाश' एक ही ग्रंथ के दो नाम हैं। वस्तुतः यह 'अमरकोश' (संस्कृत का प्रसिद्ध कोश ग्रंथ) की पद्यबद्ध टीका है। इसी प्रकार 'छन्दप्रकाश' भी कोई स्वतंत्र ग्रंथ नहीं है। यह 'छन्दार्णव' का परिशिष्ट है।1 डॉ. भगीरथ मिर ने अपने 'हिन्दी काव्यशास्त्र का इतिहास' में 'काव्यनिर्णय', 'शृंगार–निर्णय' और 'रससारांश' का विस्तृत परिचय दिया है। 'रससारांश' का रचनाकाल वे संवत् 1791 वि. मानते हैं। अब आचार्य विश्वनाथप्रसाद मिश्र ने दो खण्डों में भिखारीदास जी की चार कृतियाँ–'रससारांश', 'शृंगारनिर्णय', 'छंदार्णव' और 'काव्य–निर्णय'–का संपादन करके 'नागरी–प्रचारिणी–सभा, काशी'के माध्यम से प्रकाशित करा दिया है। अतः भिखारीदास के श्रेष्ठ ग्रंथ सर्वसुलभ हो गये हैं।

इसमें सन्देह नहीं कि आचार्य भिखारीदा की दृष्टि हिन्दी में सर्वाङ्. गपूर्ण काव्यशास्त्र प्रस्तुत करने की थी और अपने इस प्रयत्न में वे बहुत–कुछ सफल भी हुए हैं। आचार्य शुक्ल जब यह कहते हैं कि 'सच्चे आचार्य का पूरा रूप इन्हें भी नहीं प्राप्त हो सका है"2 तो उनके सामने संस्कृत के आचार्यों की वह अप्रतिम मेधा–सम्पन्न अखण्ड परम्परा थी, जिसकी चिन्तन और विश्लेषण क्षमता आज भी अपना प्रतिमान आप है। वैसे यह तो आचार्य शुक्ल भी स्वीकार करते हैं कि "इस क्षेत्र में औरों को देखते दास जी ने अधिक कार्य किया है।"3

आचार्य भिखारीदास सच्चे और पूरे आचार्य भले न रहे हों किन्तु उनमें कुछ ऐसी विशेषतायें निर्विवाद रूप से विद्यमान हैं जो हमारा ध्यान बरबस आकृष्ट करती हैं। सूत्र रूप में इन विशेषताओं को इस प्रकार रखा जा सकता है–

1. काव्यांगों का विस्तृत और समग्र विवेचन।
2. काव्य–भाषा के व्यापक आधार की प्रतिष्ठा।
3. 'ध्वनि' को काव्य की आत्मा के रूप में स्वीकार करना।
4. रसवत, प्रेय, उर्जस्वि, समाहित आदि को अलंकार न मानकर रस का ही अपरांग मानना।
5. अलंकारों के वर्गीकरण का उपमेय–उपमान–सम्बन्धों को दृष्टि में रखकर तर्कसंगत आधार प्रस्तुत करना।
6. काव्य में तुकों के महत्त्व को स्वीकार करते हुए उनके उत्तम, मध्यम, अधम आदि भेदों की कल्पना।
7. स्वकीया नायिका के लक्षण को परम्परा से हटकर व्यापकत्व प्रदान करना।

काव्यांगों के समग्र निवेदन में हिन्दी के आचार्य बहुत कम प्रवृत्त हुए हैं। प्रायः आचार्यों ने 'अलंकार', 'रस' या 'नायिका–भेद' के ग्रन्थ लिखे हैं। ऐसी स्थिति में भिखारीदास जी का काव्य के स्वरूप, प्रयोजन हेतु आदि के अतिरिक्त 'रस', 'अलंकार', 'गुण–दोष', 'ध्वनि', 'गुणीभूत व्यंग्य', 'पदार्थ–निर्णय', 'शब्द–शक्ति', 'भाषा', 'छंद', 'तुक' आदि समस्त काव्यांगों का विवेचन निश्चय ही महत्त्वपूर्ण माना जाएगा। यह अवश्य है कि उन्होंने मुख्य रूप से आचार्य मम्मट एवं

जयदेव का आधार ग्रहण किया है और अपने पूर्ववर्ती हिन्दी आचार्यों–केशव, चिन्तामणि, सूरति मिश्र, श्रीपति आदि–से भी पर्याप्त सामग्री ग्रहण की है किन्तु इससे उनकी समग्र और व्यापक दृष्टि का महत्त्व कम नहीं हो जाता।

काव्य–भाषा के सम्बन्ध में भिखारीदास के विचार अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। वे काव्य–रचना के लिए ब्रजभाषा को सर्वोत्तम मानते हैं किन्तु यह भी कहते हैं कि वह संस्कृत, फारसी आदि के शब्द–प्रयोगों से समृद्ध होने पर और भी प्रभावपूर्ण बन जाती है। उनकी यह भी मान्यता है कि 'ब्रजभाषा' के ज्ञान के लिए ब्रजमण्डल का निवास ही एक मात्र साधन नहीं है, सूर, केशव, मंडन, बिहारी, कालिदास, ब्रह्म, चिन्तामणि, मतिराम, भूषण, लीलाधर, सेनापति, नेवाज, निधि, नीलकण्ठ, देव, सुखदेव, आलम, रहीम, रसलीन आदि कवियों की रचनाओं में प्रयुक्त भाषा के अध्ययन से भी उसका ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है।4 निश्चय ही काव्य–भाषा के सम्बन्ध में यह दृष्टि व्यापक और उदार है।

हिन्दी के आचार्यों ने मुख्यतः 'रस' और 'अलंकार' को ही महत्त्व दिया है। 'ध्वनि' के महत्त्व का प्रतिपादन बहुत कम हुआ है। ऐसी स्थिति में भिखारीदास जी का 'ध्वनि' को उत्तम काव्य मानना और उसके 43 भेदों का विवेचन करना एक विशिष्ट उपलब्धि मानी जायेगी।

हिन्दी में तुकों का प्रयोग छन्द–रचना की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। भिखारीदास ने पहली बार इस महत्त्व को समझा और उस पर गम्भीरतापूर्वक विचार किया। इससे यह लक्षित होता है कि उनमें नवीन काव्य–तत्त्वों को समझने की मौलिक दृष्टि विद्यमान थी। युग–प्रवृत्ति से बँधे होने के कारण वे दूर तक अपनी मौलिकता का परिचय नहीं दे सके। इसी प्रकार स्वकीया नायिका के लक्षण को व्यापक बनाने में भी उनकी सूझ–बूझ का परिचय मिलता है। उनकी मान्यता थी कि श्रीमानो (प्रभु वर्ग के लोगों) के घरों में विवाहिताओं के अतिरिक्त अन्य अनेक भोग्या नायिकायें होती हैं। उन्हें भी 'स्वकीया' ही समझना चाहिए।

श्रीमानन के भौन में भोग्य भामिनी और।
तिनहूँ को सुकियाहि में गनै सुकवि–सिरमौर।।5

तात्पर्य यह कि भिखारीदास का एक आचार्य के रूप में भी विशेष महत्त्व मान्य होना चाहिए। उनमें लक्ष्य की नवीनता के आधार पर लक्षणों में विस्तार और परिवर्तन करने की अच्छी समझ थी।

एक कवि के रूप में भिखारीदास रीति काव्यधारा की प्रथम श्रेणी के कवियों में प्रतिष्ठा प्राप्त करने योग्य हैं। इनकी प्रशंसा करते हुए आचार्य शुक्ल ने कहा है– "इनका शृंगारनिर्णय' अपने ढंग का अनूठा ग्रंथ है। उदाहरण मनोहर और सरस हैं। भाषा में शब्दाडम्बर नहीं है। न ये शब्द–चमत्कार पर टूटे हैं, न दूर की सूझ के लिए व्याकुल हुए हैं। इनकी रचना कलापक्ष में संयत और भाव–पक्ष में रंजन–कारिणी है।"6 कम से कम शब्दों में किसी भी श्रेष्ठ कवि को इससे अच्छी दाद नहीं दी जा सकती। इनके सरस एवं भावपूर्ण छन्दों के कुछ उदाहरण अप्रासंगिक न होंगे–

"नैनन को तरसैये कहाँ लौं कहाँ लौं हियो विरहागि में तैये।
एक घरी न कहूँ कल पैये कहाँ लगि प्रानन को कलपैये।
आवै यहै अब 'दास' विचार सखी चलि सौतिहु के गृह जैये।
मान घटे तें कहा घटिहै जु पै प्रान पियारे को देखन पैये।।
आनन है अरविन्द न फूल्यो अलीगन भूल्यो कहा मडरात हौ।
कीर तुम्हैं कहा बाय लगी भ्रम विम्ब के ओठन को ललचात हौ।
दास जू व्याली न बेनी बनाव है पापी कलापी कहा इतरात हौ।
बोलती बाल न बाजति बीन कहा सिगरे मृग घेरत जात हौ।।

सिख नख फूलनि के भूषन विभूषित कै
बाँधि लीनी वलया विगत कीनी वजनी
तापर सँवारयो सेत अम्बर को डंबर
सिधारी स्याम–सन्निधि निहारी कहू न जनी।
छीर के तरंग की प्रभा को गहि लीन्ही तिय,
कीनी छीरसिन्धु छिति कातिक की रजनी।
आनन प्रभा सों तन छाँहहू छिपाए जाति
भौरँनि की भीर संग लाए जाति सजनी।"7

कहना न होगा कि परम्परा–पोषित होने पर भी उपर्युक्त सभी छन्द भावों की सरसता, भाषा की सहज–वक्रता तथा प्रभाव की मार्मिकता में बेजोड़ हैं।

तात्पर्य यह है कि आचार्यत्व और कवित्व का जैसा युगपत उत्कर्ष भिखारीदास के व्यक्तित्व में लक्षित होता है, वैसा रीति–काव्यधारा के किसी अन्य कवि में नहीं। रीति–काव्य का कोई भी संग्रह इनको अलग कर देने पर अधूरा और अपूर्ण रह जाएगा।

संदर्भ

1. प्रो. मोहिनी टाया, हिन्दी–साहित्य के इतिहासों का इतिहास, पृष्ठ 164
2. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी–साहित्य का इतिहास, पृष्ठ 278
3. वही, पृष्ठ 278
4. सूर, केसव, मंडन, विहारी, कालिदास, ब्रह्म
   चिन्तामनि, मतिराम, भूषण सु जानिए।
   लीलाधर, सेनापति, निपट, नेवाज, निधि
   नीलकंठ मिश्र सुखदेव, देव मानिए।
   आलम, रहीम, रसखानि, सुंदरादिक
   अनेकन सुमति भए कहाँ लौं वखानिए।
   ब्रजभाषा हेतु ब्रजवास ही न अनुमानौ,
   ऐसे एसे कविन की बानी हू सों जानिए।
5. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी–साहित्य का इतिहास, पृष्ठ 279
6. वही, पृष्ठ संख्या 281
7. डॉ. रामचन्द्र तिवारी, रीतिकालीन हिन्दी काव्य, पृष्ठ संख्या 72